International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, RJIF (Impact Factor) 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 1; January 2016; Page No. 23-24

हिन्दी और राष्ट्रीय एकता

विश्वेश कुमार मिश्र

जे0आर0एफ0, शोध छात्र हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

प्रस्तावना

भाषा के बिना हम किसी समाज की कल्पना भी नहीं कर सकते। किसी स्थान की जलवायु नदी और पर्वत, उसकी सर्दी और गर्मी तथा अन्य मौसमी हालतें सब मिलजुल कर वहाँ के प्राणियों में एक विशेष गुण का विकास करती हैं, जो प्राणियों की सूरत, व्यवहार, विचार और स्वभाव पर अपनी छाप लगा देती है और अपने को व्यक्त करने के लिए एक विशेष भाषा बोली का निर्माण करती है। इस तरह हमारी भाषा का सीधा सम्बन्ध हमारी आम से है या इस प्रकार कह सकते हैं कि भाषा हमारी आत्मा का बाहरी रूप है। ज्यों–ज्यों हमारी आत्मा का विकास होता है, हमारी भाषा भी प्रौढ़ एवं पुष्ट होती है। राजनीतिक, व्यापारिक या धार्मिक सम्बन्ध जल्द या देर से कमजोर पड़ सकते हैं और प्रायः टूट जाते हैं, लेकिन भाषा का रिश्ता समय और अन्य विखरने वाली शक्तियों की परवाह नहीं करता और एक तरह से अमर हो जाता है।

राष्ट्रीय एकता और भाषा

किसी राष्ट्र को दृढ़ और मजबूत बनाने के लिए उस देश में सांस्कृतिक एकता का होना नितान्त आवश्यक है और किसी राष्ट्र की भाषा तथा लिपि इस सांस्कृतिक एकता का एक विशेष अंग है। यह निश्चित है कि राष्ट्रीय भाषा के बिना किसी राष्ट्रके अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। जब तक भारत की कोई राष्ट्रीय भाषा न हो, तब तक वह राष्ट्रीयता का दावा नहीं कर सकता। सम्भव है कि प्राचीन काल में भारतवर्ष एक राष्ट्र रहा हो, परन्तु बौद्धों के पतन के बाद उसकी राष्ट्रीयता का भी अन्त हो गया था। यद्यपि देश में सांस्कृतिक एकता वर्तमान थी तो भी भाषाओं के भेद के देश को खण्ड–खण्ड करने का काम और भी सुगम कर दिया था। मुसलमानों के शासन काल में भी जो कुछ हुआ था उसमें भिन्न–भिन्न प्रान्तों का एकीकरण तो हो गया था, परन्तु उस समय भी देश में राष्ट्रीयता का अस्तित्व नहीं था। भारतवर्ष में राष्ट्रीयता का आरम्भ अंग्रेजी राज्य की स्थापना के साथ–साथ हुआ और उसी की दृढ़ता के साथ–साथ इसमें वृद्धि भी हुई। अतः राष्ट्र के जीवन के लिए यह बात आवश्यक है कि देश में सांस्कृतिक एकता हो और भाषा की एकता उस सांस्कृतिक एकता का प्रधान स्तम्भ हो। भारत भाषा की दृष्टि से भी एक उपमहाद्वीप है। यहाँ भाषा तथा बोलियों की संख्या सैकड़ों में है। बाइस भाषाओं को क्षेत्रीय भाषा के रूप में स्वीकार कर लिया गया है किन्तु अनेकता में एकता का स्वर निनांदित होना ही यहाँ की विषेशता है।

हिन्दी भाषा जिसे भारतीय संविधान मे राजभाषा घोषित कर दिया गया और जो भाषा इस देश की आत्मा को बहुत अंश तक काफी काल से व्यक्त करती आ रही है, अनेकता के बीच एकता के साम्राज्य को स्थापित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देती आ रही है। हिन्दी भाषा के विकास में उन लोगों का योगदाप तो महत्वपूर्ण है ही पर जो हिन्दी को अपनी मातृभाषा मानते हैं अपितु उनका भी योगदान अत्यन्त विशेष है जिनके क्षेत्र में हिन्दी न तो बोली जाती थी और न ही जिनकी मातृभाषा हिन्दी थी। राहुल सांकृत्यायन ने ''स्वयंभू'' की रामायण को हिन्दी का प्रथम ग्रन्थ माना है। यह रामायण 'पउम चरिउ' या 'पदम चरित' नाम से लिखी गयी और इसके लेखक स्वयं भू कर्नाटक या महाराष्ट्र के रहने वाले यापनीय सम्प्रदाय के जैन थे। इस प्रकार हिन्दी का प्रथम ग्रन्थ दक्षिण भारत के एक जैन कवि द्वारा लिखा गया। हिन्दी भाषा की इसी शैली के लेखक चन्द्रबरदाई माने जाते हैं। इन्होंने जो शैली प्रतिपादित की, वह चौदहवीं, पन्द्रहवीं शताब्दी तक 'पृथ्वीराज रासों' से लेकर 'बीसलदेव रास' और 'हमीर रासों तक चलती रही है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन काल से ही हिन्दी केवल किसी एक क्षेत्र या धर्म की भाषा नहीं है। यह भाषा हिन्दुस्तान की एक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित रही है।

पत्रकारिता के माध्यम से एकता स्थापन

पत्रकार कला की दृष्टि से तो अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में पत्रकारों ने हिन्दी पत्रकार कला का बहुत विकास किया। कश्मीर के श्री दुर्गा प्रसाद मिश्र तथा श्री छोटूलाल मिश्र ने कलकत्ता से दो बड़े पत्र 'भातर मित्र' उचितवक्ता' निकाले। श्री दुर्गाप्रसाद ने श्री सदानन्द मिश्र और श्री गोविन्द नारायण के सहयोग से 'सार सुधानिधि' 1879 में निकाला, ये सब अहिन्दी भाषी थे। कलकत्ता में एक दूसरा पत्र मार्तण्ड निकला, इसके सम्पादक मौलवी नसीउद्दीन थे। लाहौर से बंगाली प्रकाशक बाबू नवीनचन्द्र राय जी हिन्दी और उर्दू में 'ज्ञान प्रदायिनी'' पत्रिका निकालते थे। इस पत्र के सम्पादक थे कश्मीरी पंडित कुर्कुदराम। कलकत्ते में बंगवासी कार्यालय से ही 1890 में हिन्दी बंगवासी प्रकाशित हुआ। इसके सम्पादक पं0 अमृतलाल चक्रवर्ती थे। हिन्दी पत्रकारों की बाद की पीढ़ी में श्री बाबूराम विष्णु पराड़कर, श्री लक्ष्मण नारायण गर्दे, श्री माधवराय सूबे, श्री सिद्धनाथ माधव आगरकर जैसे अनेक प्रतिस्ष्ठित मराठी भाषी प्रमुख हैं। महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, पंजाब और बंगाल के अनेक लेकख और पत्रकार आज भी हिन्दी के क्षेत्र में प्रमुख हैं। गोलकुण्डा के बादशाहों और निजाम के दरबार में हिन्दी कविताओं का प्रचलन रहा और इसके बाद दक्खिनी हिन्दी के गद्य और पद्य का विकास हुआ। महाराष्ट्र के नामदेव, ज्ञानेश्वर और तुकाराम ने हिन्दी में कवितायें लिखीं। गुजरात में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दी को आर्य समाज की धार्मिक भाषा ही बना दिया। हिन्दी के दूसरे प्रचारक गुजरात के ही महात्मा गांधी हुए जिनके नेतृत्व में हिन्दी का प्रचार न केवल दक्षिण भारत में बल्कि समूचे भारत मे हुआ। हिन्दी के वर्तमान प्रचारकों में राजर्षि पुरूषोत्तमदास टण्डन का नाम नहीं भुलाया जा सकता है। इस समय जो मुख्य हिन्दी लेखक हैं उनमें कितने ही ऐसे है जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है परन्तु उनके बारे में सोचते हुए यह कभी विचार ही नही आता किवे हिन्दी भाषा–भाषी नहीं हैं। हिन्दी साहित्य जो लगभग एक हजार वर्ष से विकसित होता चला आ रहा है, बहुत सम्पन्न है। शास्त्रीय साहित्य को छोड़ दे तो भी विज्ञान, प्रोद्योगिकी, पत्रकारिता, कला, व्यापार हरके क्षेत्र में हिन्दी का ज्ञान भण्डार बढ़ा है और उसका साहित्य न केवल देश की बल्कि संसार की अनेक भाषाओं से टक्कर ले सकता है। इस तरह हिन्दी भाषा देश की एक प्रमुख कड़ी के रूप में विकसित हुई और बढ़ती चली जा रही है। चाहे प्राचीन संतो का युग हो, चाहे सूफी की प्रचार भावना हो, चाहे मुगल और बहमनी

बादशाहों ने इसे काव्य की भाषा माना हो, चाहे व्यापारियों, सैनिकों और दूसरे कामकाजियों ने इसे अपने लिए उपयोगी माध्यम चुना हो, सही बात यह है कि हिन्दी इस देश की आत्मा को अभिव्यक्त करने में सफल हुई है। मेरी दृष्टि से राजनीतिक स्वाधीनता से पहले ही राष्ट्र के मन में इसने अपने लिए आदरभाव उत्पन्न कर लिया था चूंकि यह राष्ट्र के विभिन्न वर्गों और तत्वों की भाषा थी, जिनके राजनीतिक विचार, धार्मिक विचार, या आर्थिक विचार एक दूसरे के मेल न भी खाते थे, फिर भी हिन्दी सभी के लिए एक ऐसा माध्यम रही, जिसने अपनी अभिव्यक्ति का पूरा–पूरा अवसर दिया।

यह सही है कि इसके बाद भी हिन्दी उस आसन पर नहीं पहुंच सकी है जिसकी वह अधिकारिणी है। अन्तरराष्ट्रीय संगठनों में हिन्दी को मान्यता नहीं है और भारत में कुछ प्रतियोगी परिक्षाएं ऐसी हैं जिनका प्रश्नपत्र केवल अंग्रेजी में होता है। हिन्दी को अपने स्थान पर पहुंचने के लिए अभी कुछ समय लगता दिखाई दे रहा हैं। यह सही है कि आज भी जब संकट का समय होता है, जिस समय निर्णायक दृष्टिकोण अपनाने के लिए जनता के सहयोग की अपेक्षा की जाती है, जिस समय आत्मनिर्भरता और आत्म–सम्मान का प्रश्न उठता है, भारत की राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में एक भाषा उठती है – हिन्दी। भारत के विभिन्न भागों की जनता ने स्वेच्छा से, अपने अंशदान से, हिन्दी को विकसित किया है और इसीलिए हिन्दी आज भी अपनी इस सामर्थ्य के बल पर देश को एक बनाये रखने में सक्षम है।

निष्कर्ष

आज आवश्यकता इस बात की है कि भाषा को हम भुला दें तथा राष्ट्रीय अखण्डता के लिए हिन्दी को बिना किसी विरोध के राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करें तथा हिन्दी भाषा का ही अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करे यह बात सत्य है कि अहिन्दी भाषा–भाषी व्यक्तियों के लिए इसमें थोड़ी परेशानी अवश्य होगी फिर भी जिस देश के लिए यदि हमें मातृभाषा के प्रति माहभंग करना पड़े तथा थोड़ी सी परेशानी उठानी पड़े तो उन जवानों के त्याग की तुलना में हमारा त्याग नगण्य होगा और हमें यह त्याग करना पड़ेगा क्योंकि राष्ट्र की एकता आज हमारे लिए सर्वोपरि है। भारत में एक प्रान्त के व्यक्ति को दूसरे प्रान्त के व्यक्ति से जोड़ने का कार्य अंग्रेजी कर रही है जबकि राष्ट्र भाषा हिन्दी है यह दुर्भाग्य है। हमें हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में विकसित करना होगा क्योंकि उसी के माध्यम से देश में राष्ट्रीय एकता की भावना को बल मिलेगा और हमारी राष्ट्रीय एकता विकसित होगी।

सन्दर्भ –

1. प्रतियोगिता दर्पण, जनवरी, अंक 2016
2. सामयिक निबन्ध, डॉ0 चतुर्वेदी, पकार प्रकाशन आगरा
3. घटनाचक्र, जनवरी अंक 2016
4. मंजूषा द्वितीय संस्करण
5. परीक्षा मन्थन हिन्दी निबन्ध, विशेषांक
6. भारत का संविधान, जयनारायण पाण्डेय
7. दैनिक जागरण समाचारपत्र के आलेख
8. हिन्दुस्तान समाचारपत्र के सामयिक आलेख